सुरता
डा. डी. पी. देशमुख

सदा के लिए ओझल हो गए आल्हा गायक नारायण चंद्राकर

छत्तीसगढ़ अंचल में दुर्ग जिले के जामगांव आर में 14 दिसंबर 1955 को नारायण प्रसाद चन्द्राकार जी का जन्म हुआ था। आप बी एस पी उ मा वि भिलाई से भूगोल विषय के व्याख्याता के पद पर कार्य करते सेवानिवृत्त हुए। आप जीवन भर शिक्षाविद होने के साथ साथ साहित्यकार और लोक कलाकार के रूप में परिश्रम करते रहे। आपकी छत्तीसगढ़ महतारी के प्रति जीवटता का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि आप अपने पैतृक गांव में किसान और किसानिन की मूर्ति स्थापित किए। सबसे अच्छी बात यह रही कि आपके कार्यों में परिवार का हमेशा सहयोग मिला। आप जहां भी जाते धोती कुर्ता के साथ रंग बिरंगी पगड़ी आपकी विशेष पहचान रहती। आपने साक्षरता पर काम करने के साथ ही छत्तीसगढ़ी वीडियो फिल्म का भी निर्माण किया। आप गद्य और पद्य साहित्य दोनों में ही लेखन करते रहे। आपने कई पुस्तकों का प्रकाशन भी कराया। अंत में लंबे समय आल्हा गायन की शैली में हमारे विभूतियों को जन मानस में चित्रित करते रहे। आप आल्हा से संबंधित मंचीय प्रस्तुति भी देते रहे। आपकी इस प्रस्तुति के कारण आल्हा गायन के रूप में विशेष पहचान बनी। नारायण प्रसाद चन्द्राकार जी अपने जीवन में सरलता के साथ बड़े से बड़े काम को आसानी से निपटा लिया करते थे और इसी सरलता के कारण ही कला और साहित्य जगत में लोकप्रिय हुए। आप वरिष्ठ और कनिष्ठ कलाकार तथा साहित्यकारों के बीच बेहतर संतुलन बनाकर काम करते थे। साहित्यिक और लोक मंचों में आपकी उपस्थिति बराबर देखी जाती थी।

पौराणिक
डा. सत्यभामा आडिल

भानुमति ही कौशल्या नाम से प्रसिद्ध हुई

रामकथा से संबंधित प्राचीन धर्म ग्रंथों में उत्तर और दक्षिण कोसल का वर्णन मिलता है। दक्षिण कोसल प्रदेश में चंद्रखुरी ग्राम स्थित था। वहां के राजा भानुमंत की पुत्री भानुमति थी। भानुमंत का एक नाम सुकौशल और माता का नाम सुबाला था। भानुमति कौशल नरेश सुकौशल की पुत्री होने के कारण कौशल्या कही जाने लगी। अर्थात भानुमति ही कौशल्या नाम से प्रसिद्ध हुई।

विवाह से पूर्व ही कौशल्या ने वेद शास्त्रों और धर्म ग्रंथों का अध्ययन किया था। फलस्वरूप राजकुमारी कौशल्या की प्रसिद्धि चारों ओर फैलने लगी। सम्पूर्ण कोसल प्रदेश में भ्रमण करने वाले विद्वान धर्म पंडितों से युवराज दशरथ के राज्याभिषेक में सभी प्रदेशों के राजाओं के साथ साथ दक्षिण कोसल के राजा भानुमंत यानी सुकौशल को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था। वे अपनी पुत्री भानुमति कौशल्या के साथ उस राज्याभिषेक में गए।

युवराज दशरथ के राज्याभिषेक समारोह में राजकुमारी भानुमति की तेजस्विता व सौम्य स्वरूप ने उन्हें आकर्षित कर लिया। राज्याभिषेक के बाद युवराज दशरथ ने राजा भानुमंत से भानुमति के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखा, जिसे भानुमंत से सहर्ष स्वीकार कर लिया। इसके बाद वैदिक रीति रिवाज के अनुसार विवाह सम्पन्न हुआ। लोक मान्यता है कि इस विवाह के अवसर पर कौशल्या नरेश ने अपनी पुत्री को स्त्री धन के रूप में दस हजार गांव दान में दिए थे।

गांव की कहानी
बजरंग लोहिया

कई दृष्टिकोण से महत्व का गांव केलेंडा

यह ग्राम वर्तमान सरायपाली से लगभग 22 कि मी दूर पूर्व दिशा में स्थित है। इस ग्राम में कोलडिही नामक एक पुराना बसाहट है जहां राजत्व काल में कोल जाति के लोगों में बीरकोल, परसकोल, कोलबहाल आदि ग्रामों में भी कोल जाति का निवास था। संभवतः इसी कोलडिही के नाम पर ही इस ग्राम का नाम कालान्तर में परिवर्तित होकर केलेंडा पड़ गया होगा। इस ग्राम के समीप पर्वत पर पोड़झरन, बहियाझरन, मुनिझरन प्राकृतिक स्थल है। इस ग्राम में एक जगन्नाथ मंदिर है जिसमें भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्ति है। इस मंदिर के सामने गरुड़जी की एक पाषाण मूर्ति है जो काले पत्थर की बनी हुई है। इस ग्राम में पूर्व जमींदार परिवार के वंशज रहते हैं जो बिंझवार जाति के हैं। इस जमींदार परिवार की सोलह पीढ़ी ने यहां स्वामित्व किया है। इनके अधिकार में 12 ग्राम थे, जिसे बारहपलिया कहा जाता था। इस ग्राम के मिट्टी के पहले घरों को देखने से विचित्र निर्माण प्रतीत होता है जिसमें एक घर में सात आंगन होते थे। जो भूल भुलैया सा प्रतीत होता था। बताया जाता है कि सम्बलपुर से नक्शा लाकर इस तरह के मकान बनाए जाते थे जो अन्यत्र दिखाई नहीं देते।

मुगलों के आक्रमण से भारतीय परंपराएं छिन्न-भिन्न हो गई और यहां के प्रेक्षागृह जीर्ण हो गए। तब नाटकों ने दरबारों में भाण और प्रहसन का रूप ले लिया। लेकिन लोक नाट्य की परंपरा आज भी जीवित है चाहे ढोलामारू, चंदायन या लोरिकियन रूप में हो, आज भी प्रचलित है, उनका समुचित विकास मध्य युग के धार्मिक आंदोलन की छत्र छाया में हुआ।

धार्मिक आंदोलन की छत्र छाया में हुआ नाट्य कला का विस्तार

मुगलों के आक्रमण के पूर्व भारत के सभी भागों में खासकर राज प्रसादों और मंदिरों में संस्कृत और पाली प्राकृत नाटकों के लेखन और मंथन की परंपरा रही है,लेकिन उनका संबंध अभिजात्य वर्ग तक ही सीमित था। ग्रामीणजन के बीच परंपरागत लोकनाट्य ही प्रचलित थे। मुगलों के आक्रमण से भारतीय परंपराएं छिन्न भिन्न हो गई और यहां के प्रेक्षागृह जीर्ण हो गए। तब नाटकों ने दरबारों में भाण और प्रहसन का रूप ले लिया। लेकिन लोक नाट्य की परंपरा आज भी जीवित है चाहे ढोलामारू, चंदायन या लोरिकियन रूप में हो, आज भी प्रचलित है, उनका समुचित विकास मध्य युग के धार्मिक आंदोलन की छत्र छाया में हुआ। यही युग की सांस्कृतिक चेतना का वाहक बना।

आचार्य रामचंद्र ने राम कथा को और आचार्य बल्लभाचार्य ने कृष्ण लीला को प्रोत्साहित किया। अंचल में लोक नाट्य दो रूपों में विकसित हुआ। एक तो निम्न वर्ग के देवार, नट, भट आदि लोगों में आल्हा ऊदल, ढोलामारू जैसी परंपरा को तथा पंडु, कंवर और संवरा जाति में पंडवानी और पंथी को विकसित किया। छत्तीसगढ़ में इसका प्रचार प्रसार लगभग 16 वीं और 17 वीं शताब्दी के मध्य हुआ। उत्तर भारत के रास लीला और राम लीला मथुरा, वृंदावन, काशी और इलाहाबाद से सतना, रीवा, अमरकंटक होते हुए पेंड्रा, रतनपुर, शिवरीनारायण, अकलतरा, सारंगढ़, किकिरदा, मल्दा, नरियरा, बलौदा,कवर्धा और राजिम में फैल गया। इसीलिए छत्तीसगढ़ी भाषा में अवधी और ब्रज का पुट मिलता है।

लोक नाट्यः गोपाल शर्मा

आस्था : चित्ररेखा डहरिया

लोगों की आस्था माता सरई में

छत्तीसगढ़ का नवगठित जांजगीर चांपा जिला पुरातात्विक और नैसर्गिक कलाकृतियों के लिए प्रसिद्ध है। यहां से कोरबा मार्ग पर अनेक ऐतिहासिक और पुरातात्विक महत्व के देवी देवताओं के मंदिर देखे जा सकते हैं। ऐसे ही मंदिरों में जिला मुख्यालय से लगभग 25 कि मी दूर बलौदा कोरबा मार्ग पर डोंगरी नामक ग्राम के पास माता सरई सिंगारिनी की बगिया है। नाम से ही पता चलता है कि इस स्थान पर सरई पेड़ों का घना जंगल है। इसी घने जंगल में देवी विराजमान है। इस माता में स्थानीय निवासी कई चमत्कारी घटनाओं से भक्तों को अवगत कराते हैं। स्थानीय मान्यता के अनुसार यदि कोई इस जंगल की लकड़ी को काटने का प्रयास करता है तो उन्हें किसी न किसी दंड का भागीदारी होना पड़ता है, इस कारण कोई भी इस जंगल में लकड़ी काटने नहीं आता। इस जंगल से गुजरने वाले माता के दरबार में माथा टेकने अवश्य आते हैं। अपनी मनोकामना पूर्ति के लिए भी भक्त यहां आते रहते हैं। मनोकामना पूरी होने पर भक्त नवरात्रि में जोत जवारा बोते हैं। यहां का वातावरण हरा भरा होने के कारण रमणीय लगता है।

लोक गीत
विश्वनाथ देवांगन

देवों को रिझाने के लिए गाए जाते हैं चाखना गीत

बस्तर अंचल के कांकेर क्षेत्र में धनकुल गायन के समय बीच बीच में एकरसता को तोड़ने और रस परिवर्तन के लिए मुख्य कथा से हट कर कुछ गीत गाए जाते हैं, जिन्हें चाखना गीत कहते हैं। यह गीत दो प्रकार के पहला देव चाखना और दूसरा सादा चाखना होते हैं। देव चाखना में देवी देवताओं से संबंधित गीत होते हैं, जिन पर देवी देवता रीझ जाते हैं और नृत्य करने लगते हैं, जबकि सादा चाखना इससे भिन्न होते हैं और पूरी तरह मनोरंजक। इसी तरह का देव चाखना गीत में देवी देवता से संबंधित गीत गाए जाते हैं। भोजनोपरान्त किशोर किशोरियां गांव से बाहर किसी निर्धारित स्थान पर एकत्र होकर गीत संगीत से मनोरंजन करते हैं। यह गीत प्रायः श्रृंगारिक होते हैं। दोनों पक्षों द्वारा गीत गाते नृत्य भी किया जाता है। इन गीतों को खेल गीत भी कहा जाता है। गीतों की श्रृंखला लगातार चलता रहता है। यह दृश्य काफी मनमोहक होता है।

लेखकों से..

छत्तीसगढ़ की लोक कला, लोक साहित्य, पर्यटन, तीज त्योहार, गांव की कहानी, ऐतिहासिक, पुरातात्विक, शैलचित्र, भित्तिचित्र, कला कृति और पुरखा के सुरता के साथ ही सम सामयिक विषयों पर अधिकतम 500 शब्दों पर लेख भेजें- **Choupalharibhoomi@gmail.com**

ऐतिहासिक
श्रीमती आशा ध्रुव

बिन्द्रानवागढ़ में राजा मारादेव की कूटनीति

छत्तीसगढ़ के बिन्द्रानवागढ़ अंचल में राजा धुरवा और राजकुमारी कचना के बीच राजा मारादेव दीवार बन कर खड़ा हो गया। मारादेव धरमतराई की राजकुमारी कचना को अपनाना चाहता था। राजकुमार धुरवा ने कचना को अपना बना लिया। इस बात की खबर मारादेव को लगने पर वह राजा धुरवा के खिलाफ उठ खड़ा हुआ।

राजा मारादेव और मारादेव के बीच घमासान युद्ध हुआ और मारादेव को मैदान छोड़ना पड़ा। मारादेव फिर से अपनी शक्ति बटोर कर राजा धुरवा के सामने युद्ध के लिए आ खड़ा हुआ। कई बार मारादेव ने धुरवा की गर्दन पर वार किया पर उसकी गर्दन धड़ से फिर जुड़ जाती। इस तरह बार बार मारादेव और धुरवा के बीच 46 युद्ध हुए। राजा धुरवा को माता जगदम्बा का आशीर्वाद प्राप्त होने व मारादेव राजा धुरवा की मृत्यु का रहस्य नहीं जानता था। मारादेव ने राजा धुरवा की मृत्यु का रहस्य जानने के लिए एक कलारिन को लालच दिया। कलारिन शराब बेचती थी। धन के लोभ में उसने मारादेव का साथ दिया। इधर राजा धुरवा माता जगदम्बा को दिए अपने वचनों को भूल बैठा। एक दिन कलारिन ने राजा धुरवा को शराब के नशे में चूर कर बड़े स्नेह से पूछा कि महाराज - आपका सिर कट कर भी धड़ से जुड़ जाता है, क्या यह सही बात है? शराब के नशे में राजा धुरवा ने कहा -मेरा कोई बाल बांका नहीं कर सकता। क्योंकि मैंने माता जगदम्बा से वरदान प्राप्त किया है, कि मैं न थल में मर सकता हूं न ही जल में। मुझे कोई मारना चाहे तो मेरा सिर थल में हो और धड़ पानी में हो तभी मेरे सिर को काट कर थल में ही रखे और धड़ पानी में डूबा रहे तभी मेरी मृत्यु हो सकती है। मारादेव छिप कर राजा धुरवा और कलारिन की बात को सुन रहा था। उसने धुरवा की मृत्यु का रहस्य जान लिया। अब फिर एक बार मारादेव युद्ध के लिए धुरवा को ललकारा। मारादेव धुरवा को मारने के लिए अपनी योजना में सफल हो गया। उसने अपनी कूटनीति से धुरवा का वध करने के बाद कचना को अपने साथ ले जाना चाहा, परंतु कई कोशिशों के बाद भी कचना को हिलाने में भी सफल नहीं हो सका और अंत में हार कर कचना को छोड़ कर चला गया। रोते बिलखते कचना ने अपने प्राण वहीं त्याग दी।